IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 2, Issue 3, May 2022
Impact Factor: 6.252

अनुसूचितजनजाति की बालिकाओं में शैक्षणिक स्थिति का मूल्यांकन सीधी जिले के विशेष सन्दर्भ में

Dr. Madhulika Shrivastava
Professor, Department of Sociology
Government Thakur Ranmat Singh College, Rewa, (M.P.), India

सारांश

भारतीय सामाजिक संगठन जनजातीय–संस्कृति का अनुपम अभिव्यक्ति है। भूतकालीन एवं वर्तमान परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य मे जनजाति को एक ऐसे अर्न्तविवाही बन्द समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसकी मुख्य विशेषता जन्म द्वारा सदस्यता, अधिकारों व कर्त्तव्यों का निर्धारण, अर्न्तजातीय खान–पान पर प्रतिबन्ध तथा सामाजिक संस्तरण में ऊँच–नीच पर आधारित तथा भेद–भाव, पद और स्थिति का प्रत्यक्ष रूप से जनशक्ति सरंचना और शिक्षा द्वारा निर्धारण है। मूल रूप से जनजाति हिन्दू पवित्रता, श्रेष्ठता एवं हीनता के अवधारणा पर आधारित आदर्शात्मक एवं मूल्यात्मक सम्बन्धों की एक व्यवस्था है। इसमें निहित श्रेष्ठता एवं हीनता की अवधारणाओं द्वारा भारतीय समाज संरचना में कुछ ऐसे पूर्वाग्रह, जैसे–मूल्य तथा व्यवहार–प्रतिमान उत्पन्न हुए जिससे समाज में अनेक प्रकार की सामाजिक निर्योग्यताओ का उदय हुआ। फलतः समाज के कुछ वर्गों को निम्नतर जीवन व्यतीत करना पड़ रहा है। इन वर्गों में ऐसी मनोवृत्तियों का जन्म हुआ है जिसके कारण देश के समक्ष सामाजिक बिलगाव, पिछड़ापन, निर्धनता, अशिक्षा, प्राविधिक मन्दता तथा पारस्परिक द्वेष एंव घृणा की भावना जैसी समस्याएँ विकसित हुई। सामाजिक विरासत के रूप मे प्रदत्त इन अमानवीय, असामाजिक तथा अनैतिक निर्योग्यताओं से युक्त वर्ग को समाज में ''अस्पृश्य (अनुसूचित जनजाति) की संज्ञा दी गई। ये जनजातियाँ करीब ग्यारह सौ जनजातियों व उप–जनजातियों में विभक्त हैं। यह विभाज व्यक्ति को सामाजिक संस्तरण में पद और प्रस्थिति का बोध कराने के साथ ही मूल्यों और प्रतिमानों के माध्यम से समाजीकरण कराती है। जन्मजात सदस्यता होने के वजह से अस्पृश्यों की प्रस्थिति में आजन्म परिवर्तन नहीं होता और वे अमानुषिक जीवन जीने को विवश होते हैं।

वैसे तो चातुरवर्ण सिद्धान्त के अनुसार 'शुद्र' ही अछूत/अस्पृश्य अनुसूचित जनजाति के कहे जाते हैं, किन्तु इस मान्यता को कुछ विद्वान नकारते भी हैं। घुरिये वैदिक काल में धर्मवादी शुद्धता की धारणा अत्यन्त प्रखर थी। परन्तु अस्पृश्यता की धारणा आज जिस रूप में है, वैसी नहीं थी। आपका विचार है कि ईसा से 800 वर्ष पूर्व धार्मिक पवित्रता की भावना पूर्णरूप से देखने को लिए बना हुआ है।

मनुस्मृति के अन्तर्गत शूद्रों (दलित वर्ग) एवं महिलाओं को सीमित अधिकार प्रदान किये गये थे जिनमें कर्तव्य अधिक थे और अधिकार कम। इस वर्ण व्यवस्था का आधार कर्म था किन्तु धीरे–धीरे इस वर्ग और जनजाति की स्थापना वंश के आधार पर होने लगी और यही से शोषण प्रवृत्ति का जन्म हुआ। इस प्रकार भारतीय सामाजिक संरचना में धार्मिक वैधानिकता ने सामाजिक किया कलापों पर पूर्ण अधिकार कर उच्च वर्गों के अधिकारों तथा श्रेष्ठताओं को अक्षुण्य बन दिया। फलस्वरूप समाज के कमजोर वर्ग आर्थिक, सामाजिक, तथा शैक्षिक रूप से और भी कमजोर होते चले गये और ब्राह्मण वर्ग ने अनुसूचित जनजाति को शूद्र वर्ग के अन्तर्गत मानकर इन्हें शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार से भी वचित कर दिया। समाज सेवी संस्थाओं की ओर से भी इस वर्ग विशेष की शिक्षा की कोई व्यवस्था 19वीं शताब्दी तक नही की गयी।।

समाज का प्रमुख आधार मनुष्य होता है जब तक मनुष्य को शिक्षा के माध्यम से उसकी अन्तर्निहित शक्तियों से आवगत न कराया जाये, तब तक उसका शारीरिक मानसिक, संवेगात्मक आध्यात्मिक सांस्कृतिक तथा सामाजिक विकास सम्भव नही है। बालक के सर्वागीण विकास के अभाव में समाज की नींव एवं व्यवस्था सृदृढ़ नहीं हो सकती क्योंकि शिक्षा जीवन को व्यावहारिक धरातल प्रदान करती है और प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की सच्चाईयों को उजागर करती है प्रत्येक व्यक्ति का प्रसंग आते ही दिशा में सदियों से उपेक्षित एवं शोषित जनजातियों की ओर ध्यान जाना स्वाभाविक है, जिसने जनजातिभेद की समस्या को जन्म दिया।

जनजाति भेद की समस्या का सूत्रपात वैदिक कालीन सामज व्यवस्था से प्रारम्भ होता है। वर्ण व्यवस्था का जब कोई नाम लेता है, तो वेदों, पुराणों और स्मृतियों में अकित सीमित अधिकारों की ओर अनायास ही ध्यान आकर्षित हो जाता

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
Volume 2, Issue 3, May 2022
Impact Factor: 6.252

है, क्योंकि मानव की समस्त स्वाभाविक शक्तियों का पूर्ण, प्रगतिशील विकास ही शिक्षा है, यदि शिक्षा के गौरवपूर्ण इतिहास पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होता है, कि भारतीय शिक्षा का इतिहास अत्यत प्राचीन है इसकी प्राचीनता एवं विद्धता का प्रमाण मनुस्मृति से ज्ञात होता है।

Keywords:- जनजाति समाज, शिक्षा, मूल्यांकन, शैक्षणिक परिवर्तन

सन्दर्भग्रन्थ सूची

1	अग्रवाल डा. वी. पी. (1996)	''राष्ट्रीय परिपेक्ष्य में भारतवर्ष में आधुनिक शिक्षा का आलोचनात्मक अध्ययन'' अनु बुक्स शिवाजी रोड, मेरठ
2	ओड़ लक्ष्मीलाल के. (1993)	''शिक्षा के नूतन आयाम'' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
3	इन्द्रा (1980)	''स्टेटम आफ वूमेन इन एनसियेट इण्डिया'' मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, बनारस
4	कौर राजकुमारी अमृत (1995)	''द वूमेन'' नवजीवन पब्लिशर्स हाऊस, अहमदाबाद
5	कपिल एच. के.(1992)	''अनुसंधान विधियं'' हरप्रसाद भार्गव, आगरा
6	क्रलिंगर फ्रेड एन.	''फाउन्डेशन ऑफ विहेवियर रिसर्च'' सुरजीत पब्लिकेशन, दिल्ली
7	केवन मीना जी..(1912)	''एजुकेशन ऑफ वूमेन इन इण्डिया'' ओलीफेन्ट एनर्सन एण्ड फेरियर लन्दन
8	गैरेट एच.ई.एण्ड बुडवर्स आर. एस. (2008)	''शिक्षा और मनोविज्ञान मे सांख्यकीय'' कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली
9	चौबे झारखण्ड एण्ड श्रीवास्तव कन्हैयालाल (1991)	''मध्ययुगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति'' उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ
10	तिवारी आदि नारायण (1986)	''शैक्षिक मापन और शिक्षा में सांख्यिकी'' रामनारायण लाल बेनी माधव, इलाहाबाद
11	छास गुप्ता, ज्योति प्रोवा.(1938)	''गर्ल्स एजूकेशन इन इण्डिया'' कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता
12	पाण्डेय राम सवल .(1987)	''रष्ट्रीय शिक्षा'' विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
13	मजूमदार आर.सी. (1998)	''ग्रेट वूमेन ऑफ इण्डिया'' अवदवेता आश्रम, अल्मोडा